पूर्वज एवं बाल्यकाल

पाठक बन्धुओ! हम ऐसे महामानव के पावन चरित्र का रसपान करने जा रहें हैं जो इस धरा पर बहुमूल्य वरदान के रूप में अवतरित हुए, जिन्होंने जीवन को पूर्णता से जिया और जिन्होंने आध्यात्मिक साधना का सरलतम स्वरूप प्रस्तुत किया।

हमारे चरित्र-नायक ठाकुर रामसिंहजी के पूर्वज प्रतिष्ठित रावलोत भाटी राजपूत थे, जो मूलतः ग्राम - जाखण (जैसलमेर) के निवासी थे। जयपुर राजधानी में इसी परिवार से रानी भटियाणीजी का आगमन हुआ था। इसी संदर्भ में आपके पूर्वजों को जयपुर स्टेट की ओर से बोकड़ावास ग्राम जागीर में मिला था, जिसके बदले में बाद में ग्राम मनोहरपुरा दिया गया।

ठाकुर साहिब के पूज्य दादाजी का नाम श्री प्रेमसिंहजी था जो बड़े कुशल योद्धा थे। आपके पिताजी श्री मंगलसिंहजी जयपुर दरबार के खास रिसाले में दफेदार थे। महाराज माधोसिंहजी के साथ वे इंग्लैण्ड भी गये थे। वहाँ से लौटने पर विदेश जाने वाले अधिकारियों की तरक्की हुई और मंगलसिंहजी को खातीपुरा किले का किलेदार नियुक्त किया गया। आप भी बड़े योद्धा थे। सवारी होते हुए भी गाँव पैदल आया-जाया करते थे। महाराज माधोसिंहजी आपसे काफी प्रभावित थे और आपका बड़ा अदब करते थे।

ठाकुर मंगलसिंहजी बड़े धर्म-परायण एवं अन्तर्दृष्टि प्राप्त पुरुष थे। भगवान राम आपके इष्टदेव थे। प्रतिदिन कई हज़ार नाम जप करके शयन करते। सोते समय भी आपके तालू से घड़ी की टिक-टिकी सी चलती रहती। इस प्रकार आपका अनवरत मंत्र जाप जारी रहता। आप परम भक्त थे। सीताराम और लक्ष्मणजी के आपको

प्रत्यक्ष दर्शन होते। एक दिन आप बालक रामसिंह से कहने लगे कि आजकल तो अपने यहाँ भगवान के दर्शन होते हैं, आज तुम भी दर्शन करना। अगले दिन आपने मध्यरात्रि में आपको आवाज़ लगाई कि ले रामसिंह तू भी दर्शन कर ले! इस पर आपने उठकर आंखें खोलीं और कहा कि मुझे तो दर्शन नहीं हुए। इस पर पिता मंगलसिंहजी बोल उठे ''हे भगवान इने भी आप दर्शन दो, नी तो यो मने झूंठो केवेला।'' उस समय बालक रामसिंह को भगवान राम के दर्शन तो नहीं हुए, किन्तु उनके बाल-मन पर गहरा संस्कार पड़ा और आगे चल कर आपके लिये सभी कुछ राममय हो गया।

ठाकुर सा० रामसिंहजी की माताजी का जीवन भी बड़ा धर्म-परायण और सेवापूर्ण था। वे बड़े मनोयोग से पतिसेवा में रत रहतीं। अतिथि-सत्कार में आपको बड़ा आनन्द आता। जोधपुर के मुन्याड़ गाँव में आपका जन्म हुआ था। आपका स्वभाव बड़ा सरल था। आप सबके प्रति मातृ तुल्य प्रेम बरसाते रहते।

ठाकुर मंगलसिंहजी को पहले सुपुत्री हुई, जिनका विवाह ग्रम थली निवासी श्री जोरावरसिंहजी से हुआ था, किन्तु दैवयोग से इनका देहावसान काफी पहले ही हो गया। रामसिंहजी आपकी दूसरी संतान थे जिनका शुभ जन्म 3 सितम्बर 1898 ई. को मनोहरपुरा ग्राम में हुआ। इस संभ्रान्त परिवार में बड़े लाड़-प्यार से आपका जीवन शुरु हुआ। पिताजी अपने इकलौते पुत्र को अच्छी शिक्षा दिलाना चाहते थे। अतः आपको करीब ग्यारह वर्ष की आयु में नोबल्स स्कूल, जयपुर में भर्ती करा दिया गया; जहाँ उन्होंने पाँच वर्ष शिक्षा ग्रहण कर नवीं कक्षा उत्तीर्ण की। वे अपने गांव से विद्यालय तक पैदल ही आया-जाया करते थे, जो करीब 10 किलोमीटर दूरी पर था। आपको जिमनास्टिक व फुटबाल खेलने का शौक था। शक्ति-संवर्धन के लिए आप रात को चने भिगोकर सवेरे खाया करते। बचपन में आपकी ड्यूटी चिड़ियों को दाना-पानी डालने की लगाई गई, जिसके एवज़ में आपको रोजाना कुछ पैसे मिलते। आप महीने के आखिर में उन पैसों का भी बाजरा

खरीद कर चिड़ियों को डाल देते। सम्पन्नता के बीच रहते हुए भी कुंवर रामसिंहजी का जीवन सादा और सरल रहा।

सेवाभाव आपकी रग-रग में रमा था। आप सबकी मदद करने को तत्पर रहते। अपने बाल्यकाल का संस्मरण सुनाते हुए आप कहने लगे कि ''एक दफे पिताजी सा० कुर्सी पर थाली रखकर भोजन कर रहे थे और मैं पास में खड़ा हुआ था। इस पर आपने मुझे बैठने को कहा और फिर कहने लगे कि 'रामसिंह थारे जसो सपूत तो भाटीकुल में न होयो न होवलो।' मैंने जब कारण पूछा तो कहने लगे 'देख तू ऊबो ऊबो जीमण करा र्‌यो छे-और मूँ जीम र्‌यो छूँ।' वे इसी तरह मुझसे मानसिक सेवा लिया करते। हाथ पकड़ खुद खड़े हो जाते और कहते- 'वाह भाई रामसिंह! वाह!' माता-पिता का हृदय कितना कोमल होता है, उनके ऋण से उऋण नहीं हो सकते।

आप बड़ों का खूब अदब करते और हर काम में हाथ बटाते। अपने पूज्य माता-पिता के प्रति आपका स्नेह व सम्मान अगाध था। उनकी सत्यनिष्ठा और भक्तिभाव का आप पर गहरा असर पड़ा। छोटी उम्र में ही आप भगवान राम की आराधना करने लगे। कभी कोई संकट होता या डरावना सपना देखते तो हृदय से राम-राम पुकारने लगते और वह संकट टल जाता। सत्य को जानने की शुरु से आपमें तीव्र जिज्ञासा थी। आप भक्ति-सागर, छन्द-गीता, रामायण आदि का स्वाध्याय करते थे। इस प्रकार माता-पिता व परिवार के आदर्श और पूर्वजन्म के संस्कारवश आध्यात्मिक-विषयों में आपकी रुचि बढ़ने लगी। संकल्प के धनी तो आप प्रारम्भ से ही थे। अतः राजपूती गरिमा के अनुरूप आपने किशोरावस्था में ही सच्चाई और कर्त्तव्यनिष्ठा के पथ पर चलने का अडिग निश्चय कर लिया। आपको एकान्त बड़ा पसन्द था। शैशवावस्था में आप मौन साधना करते। घंटो आत्मचिन्तन में बीत जाते। तन-बदन की सुध न रहती। आपका निर्मल मन प्रार्थनारत रहता। परमेश्वर के प्रति आपकी आस्था दिनोदिन प्रगाढ़ होने लगी और सत्य के दर्शन की भूख बढ़ने लगी। इस प्रकार जीवन के सभी

पहलुओं को देखते-समझते हुए कुँवर रामसिंहजी युवावस्था की ओर बढ़ने लगे। आपने मातृभाषा हिन्दी के अतिरिक्त उर्दू, फारसी और इंग्लिश का भी ज्ञान हासिल किया। जीवन संग्राम में कुछ कर गुज़रने का हौसला जागने लगा। आपमें महानता के लक्षण उजागर होने लगे।

युवावस्था एवं गृहस्थ जीवन

आपके पिताजी के एक मित्र मानपुर जिला फागी निवासी ठाकुर श्री अरिसालसिंहजी भी उच्चकोटि के संत पुरुष थे और जयपुर स्टेट में किलेदार थे। वे स्वामी विवेकानन्द के मित्र खेतड़ी नरेश अजीतसिंह जी को गुरुवत् मानते थे, जिनके सौजन्य से उन्हें भी स्वामीजी के सत्संग का लाभ मिलता रहा। अरिसालसिंहजी साधना-रत रहते और मुस्तैदी से अपनी ड्यूटी भी बजाते। आपको कुँवर रामसिंह बचपन से ही बड़े प्रिय थे। इन्हें वे अपने साथ कभी कभी गाँव भी ले जाते और बड़े लाड़-प्यार से रखते। ठाकुर अरिसालसिंहजी के दो पुत्रियाँ थीं। इनकी धर्मपत्नीजी का युवावस्था में निधन हो जाने के कारण, इन दोनों बच्चियों का लालन-पालन इनकी ताई जी ने किया। बड़ी सुपुत्री सुश्री गोपाल कँवर जब सयानी हुई, तो उन्होंने अपने मित्र ठाकुर मंगलसिंहजी से उनके पुत्र कुँवर रामसिंहजी से उनके विवाह का प्रस्ताव रखा, जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर लिया। इस तरह सत्रह साल की आयु में श्री रामसिंहजी का शुभ-विवाह गोपाल कँवरजी से सम्पन्न हुआ; दो महान आत्माओं का पावन मिलन हुआ।

इन्हीं दिनों युवा रामसिंहजी ने ब्रिटिश-सेना में भर्ती होने का विचार किया। जब आपने पिताजी से मिलीटरी में भर्ती होने की इच्छा जाहिर की तो उन्होंने कहा अब तक तो दरबार का अन्न खाया और जब सेवा-लायक हुए तो क्या दूसरों की नौकरी करोगे? फिर प्रेम से बोले ''आपणे तो महाराजा सा. की सेवा ही ठीक छै'', यह सुन आपने तुरन्त विचार बदल दिया और पिताजी सा० की इच्छानुसार जयपुर

स्टेट पुलिस में सामान्य कांस्टेबल के रूप में भर्ती हो गये। कुछ ही समय में अपनी कर्त्तव्य-निष्ठा के आधार पर आपको हेड कांस्टेबल और फिर सब-इन्सपेक्टर (थानेदार) के पद पर पदोन्नत किया गया। आपने सिफारिश के आधार पर कभी पदोन्नति स्वीकार नहीं की। पुलिस की सेवा में रहते हुए आपकी तैनाती जयपुर स्टेट के कई थानों में होती रही। सभी थानों पर आप सदा अकेले ही रहे और अपनी धर्मपत्नी गोपाल कँवर जी को अपने पूज्य माता-पिता की सेवा हेतु पूरे सेवाकाल में गाँव में ही रखा। अवकाश मिलने पर आप अपने गाँव पधारते और परिवार की देखभाल कर वापस ड्यूटी पर लौट जाते।

साध्वी गोपाल कँवर एवं परिजन

गोपाल कँवर का जन्म सन् 1904 ई. में मानपुर ग्राम में हुआ था। उन पर अपने तपोनिष्ठ पिताश्री की अमिट छाप थी। चार वर्ष की छोटी आयु में ही आपकी प्रिय माँ का अकस्मात् देहावसान हो गया। अतः आप व आपकी छोटी बहिन का लालन-पालन उनकी पूज्य ताई ने किया। छोटी उम्र से ही गोपाल कँवर जी घर के सभी काम-काजों में हाथ बटाने लगीं। वे अपने पिताश्री की पूरी देखभाल करतीं और बचे हुए समय में ठाकुर जी का भजन करतीं। आप सेवा और त्याग की प्रतिमा थीं।

छोटे-बड़े सबको आदर देतीं और बड़े प्रेम से सबकी सहायता करतीं। इस तरह आप सेवा-साधना के बीच बड़ी हुईं। ठाकुर सा० रामसिंहजी के साथ विवाह के पवित्र बन्धन में बंधने के बाद इन्होंने स्वयं को पूरी तरह पति परमेश्वर की सेवा में समर्पित कर दिया। आपके पतिदेव की नियुक्ति स्थान-स्थान पर होती रही, जहाँ वे पुलिस की कठोर सेवा में अहर्निश लगे रहते। इधर साध्वी गोपाल कँवर अकेले ही गाँव में रह कर अपने सास-ससुर की सेवा में संलग्न रहतीं। ठाकुर सा० कहा करते कि "मैं तो अपने माता-पिताजी की

खास सेवा नहीं कर सका, लेकिन मेरी सहधर्मिणीजी ने उनकी खूब सेवा की और मेरी कमी को पूरा किया।''

गोपाल कँवर जी ने मौन तपस्विनी की भाँति अपने जीवन को पूरी तरह अपने पतिदेव के अनुरूप ढाल लिया। ठाकुर सा० अपने साधनामय जीवन में उन्हें सबसे बड़ी सहायक समझते थे और प्रसंगवश गद्‌गद् हो फरमाते ''मुझमें जो भी कमियाँ थीं उन सबको वे पूरा करती थीं।'' आपके ससुर सा० की खुराक अच्छी थी। वे कभी खाना खाकर भूल जाते और रात्रि को बारह-एक बजे उठ कर पूछते ''आज कांसो कोने परस्यो कांई'' तो गोपाल कँवर जी तुरन्त उठकर चूल्हा जलातीं और भोजन तैयार करके परसतीं। आप बड़ी तेजस्वी महिला थीं। गृहस्थ के सभी काम कुशलता से निपटा कर वे अपना आध्यात्मिक नित्यकर्म पूरा करतीं; फिर सबके बाद भोजन करतीं। आप बहुत थोड़ी सादी खुराक लेतीं, किन्तु प्रेमी परिजनों और आगन्तुकों को स्वादिष्ट व्यंजन बना कर खिलातीं। सबके बाद सोतीं और फिर बड़े सवेरे उठकर गृहकार्य में लग जातीं। यह थी उनकी एकाकी मौन साधना। ठाकुर सा० की आध्यात्मिक प्रगति में गोपाल कँवर जी का अद्‌भुत योगदान रहा। वे खुद कहा करते कि उन्हें इस मार्ग पर बढ़ाने में उनका सर्वाधिक योगदान रहा। वे बताते ''मेरी आत्मिक उन्नति में उनसे बड़ी सहायता मिली। मेरे जैसे आदमी को उन्होंने सब तरह निभाया; हर चीज़ को बरदाश्त किया।'' अपनी अर्धांगिनी के समर्पण भाव से अनुप्राणित हो, वे बोल उठते –

पतिव्रता मैली-भली, काली कुचिल कुरुप।
पतिव्रता के रूप पर, वारूँ कोटि सरूप।।

राजपूती परम्परानुसार आप सदा परदे में रहतीं। आप साहसी महिला थीं और अन्याय का प्रतिकार करने को सदा सन्नद्ध रहतीं। मौका आने पर आप अपनी आन-बान पर मर मिटने को उद्‌यत हो जातीं।

एक बार गांव में कुछ विरोधियों के बहकावे में आपके घर की तलाशी होने की जब आपको खबर लगी तो आप तुरन्त हाथ में नंगी तलवार ले इसका प्रतिरोध करने अकेली खड़ी हो गईं। जब लोगों को इसका पता लगा तो वे भयभीत हो बिना तलाशी के चुपचाप लौट गये।

गृहस्थ-धर्म की कठोर साधना में लगी रह कर भी वे दीन-दुखियों की सेवा-सहायता करती रहतीं। भूखों को भोजन करातीं। कुछ बीमारियों के आपको घरेलू नुस्खे मालूम थे, जिनका वे प्रयोग करतीं; बच्चों की नजर उतारतीं, हंसली बिठातीं, पानी मन्तर कर पिलातीं। अपने पतिदेव की सेवा में आने वाले भक्तों को मातृतुल्य स्नेह से खिलातीं-पिलातीं, लाड-लड़ातीं। उनका कुशलक्षेम पूछतीं; परमेश्वर से उनके लिये प्रार्थना करतीं; आशीर्वाद देतीं "खूब भजन करो भगवान का।" आगन्तुक भक्त, माँ की निश्छल ममता पा निहाल हो जाते। सभी ताजा-दम हो लौटते, मानों माँ ने अपने निर्मल स्नेह से नहला धुलाकर, हृदय से लगाकर उन्हें आल्हादित कर दिया हो।

ठाकुर सा० के शरीर छोड़ने से एक दिन पूर्व अपने प्रिय सुपुत्र के माध्यम से माँ गोपाल कंवरजी ने आपसे कहलवाया कि अब आप परम-धाम पधारने वाले हैं, इसलिये आपकी सेवा-चाकरी में लगे सभी भक्तों को आप ईश्वर की भक्ति और शक्ति का आशीर्वाद जरूर देते जावें। इस पर ठाकुर सा. ने बड़े प्रेम-भाव से गद्‌गद् हो कहलवाया "उनसे कहना कि यह सब शक्ति तो मुझसे अधिक आपके पास है। आप ही यह सब कर सकती हैं।" इस उद्‌गार से भी माँ गोपाल कँवर की उच्च आध्यात्मिक स्थिति उजागर होती है।

ठाकुर सा० के ब्रह्मलीन होने के बाद साध्वी गोपाल कँवर ने पन्द्रह वर्ष लगातार सत्संगी परिवार को संयोजित किया। सबका मार्ग-दर्शन करते हुए स्नेहपूर्वक देखभाल की। अपने सुपुत्र नारायणसिंहजी के प्रति आपका विशेष स्नेह था। उन्हें प्रेरित कर आप सत्संग और वार्षिक भंडारों का सुसंयोजन करवातीं और सभी आगन्तुक

भक्तों का स्वागत करतीं, उन्हें ध्यान-भजन में संलग्न करवातीं। अपने गुरु महाराज महात्मा रामचन्द्रजी महाराज के प्रति आपकी श्रद्धा अप्रतिम थी। गाँव पधारने पर आपने बड़े भक्तिभाव से उनकी सेवा की थी। लालाजी महाराज आपको कुँवरानी सा. कहकर सम्बोधित करते और पत्रों में उनकी कुशलक्षेम पूछा करते। एक बार जब महात्मा ब्रजमोहनलालजी गाँव पधारे, उस समय आप मोतीझरे से काफी बीमार थीं। बीमारी की हालत में आपको उनके दर्शन हुए और आप अगले दिन ही स्वस्थ हो गयीं। सवेरे स्नान करके भोजन बनाया और सबको खिलाया।

दर्शनों के बाद ठाकुर सा० ने अपने गुरु भगवान के चरण-पखार कर चरणामृत पिया था। अपनी धर्मपत्नीजी को भी चरणामृत पिलाने का ख़याल आपको बना रहा, किन्तु अचानक लालाजी महाराज निराकार हो गये। अतः अगले वर्ष जब आप फतेहगढ़ भंडारे में पधारे तो गंगास्नान कर गंगाजल ले आये और इससे अपनी गुरुमाता (लालाजी महाराज की धर्मपत्नीजी) के चरण पखार गाँव ले गये और गोपाल कँवर जी को पिलाया। उस समय आप काफी बीमार थीं, सारे शरीर पर वरम आया हुआ था। चरणामृत पीते ही आपका वरम उतरने लगा और शीघ्र ही आप पूर्ण स्वस्थ हो, गृह-कार्य करने लगीं।

वे मन में राम नाम लेती हुईं, झाड़ू-बुहारी, बिलौना, भोजन बनाना आदि सभी काम करती रहतीं। कहतीं ''राम का नाम लेते हुए गृहस्थी की गाड़ी खींचते रहो।''

वे संकेत करतीं कि भोजन पवित्र-भाव से बनाना चाहिये। शुद्ध भाव से बना भोजन अमृत के समान गुण करता है। गर्व या गुमान वे जानती ही नहीं थीं; मैं और मेरा विसर्जित कर चुकी थीं। उनका कहना था कि विनम्र व्यवहार से बैरी भी मित्र हो जाते हैं। मितव्ययता उनके स्वभाव में थी। वे हर छोटी से छोटी चीज़ को सम्हाल कर रखतीं और इसका सदुपयोग करतीं। वे कहतीं, ''फ़िज़ूल खर्ची से परमार्थ बिगड़ता है, धन के अभाव में परोपकार नहीं हो पाता और घर

में अशांति रहती है।'' माँ गोपाल कँवर में सहज उदारता थी। लोकहित के कार्यों में वे सदा आगे रहतीं। जरूरत मंदों की सहायता करतीं। अपने पीहर से दहेज में मिले कई गहने, मोहरें और चाँदी के सिक्के तक आप सहर्ष-सेवा-सहायता में खर्च करती रहीं। अन्त में एक-दो आभूषणों को छोड़ आपने सब कुछ परोपकार के लिए दे डाला।

सेवा को वे सबसे बड़ा धर्म समझतीं। परिजनों, बच्चों, अतिथियों, रोगियों, पीड़ितों की सेवा में वे अहर्निश जुटी रहतीं। अनवरत कर्म ही उनकी साधना थी। सादगी, सरलता और सच्चाई उनके स्वभाव में थी। काम करते समय वे सदा ईश-चिन्तन में निरत रहतीं, मानों यही उनकी आराधना हो। सब काम हो जाने पर भक्तिभाव से भजन करतीं। एक आसन, माला और गीता-गुटका उनकी साधना सामग्री थी। माँ गोपाल कँवर पतिदेव को साक्षात् भगवान समझती थीं। अपना आपा भूल वे सदा पतिपरमेश्वर में डूबी रहतीं। उनकी इच्छा को ही अपनी इच्छा समझतीं। हकीकत यह थी कि वे अपनी हस्ती को पूर्णतः पूज्य ठाकुर-प्रभु में विलीन कर चुकी थीं।

आप सुनातीं-

क्यूँरे-जिबड़ा डगमग डोले, धीरज क्यूं न धरै।
थारा सिर पे राम धणी छै, तू निरभै-क्यों न फिरै।।

संकेत करतीं कि मन में प्रेम-भाव होना चाहिये फिर कहीं भी और कोई भी उसकी याद कर सकता है। याद करते रहो, भजन करते रहो; मन न लगे तो बिना मन के करते रहो, लेकिन करो जरूर। उसकी याद करने वाले के पास सब कुछ होता है। जो कुछ हो रहा है उसमें उसी की इच्छा है, ऐसा समझने पर अपनी इच्छाएँ कम हो जाती हैं और सभी कुछ मिल जाता है। 'भजन बिन हीरा सो जनम गँवायो' आपका प्रिय भजन था। अच्छी संगत व सेवा के लिये आप सदा प्रेरित करतीं। आपके अनुसार दुःख-तकलीफें चेतावनी हैं। लेकिन फिर भी कई लोग नहीं संभलते, सद्मार्ग नहीं अपनाते और बार-बार दुःखी होते रहते हैं।

इस प्रकार साध्वी माँ गोपाल कँवर आजीवन गृहस्थ में रहकर सहज भाव से कठोर साधना करती रहीं; ठाकुर सा० के हर आदेश को सहर्ष बजाती रहीं और अपने आपको पूरी तरह उनमें विलीन कर दिया। सत्संगी परिवार को निरन्तर अनुप्राणित करते हुए उन्होंने 2 मार्च 1986 को निर्वाण प्राप्त किया। आपकी इच्छानुसार आपकी समाधि भी पूज्य ठाकुर रामसिंह जी की समाधि के पास ही बनाई गई, जहाँ अनवरत आपकी उपस्थिति और कृपा-वर्षा महसूस होती है।

आपके छः सन्तानें हुईं, दो पुत्रियाँ और चार पुत्र। प्रथम और तृतीय पुत्र (श्री हरिसिंह और श्री किशनसिंह जी) जयपुर दरबार की सेवा में रहे। द्वितीय पुत्र श्री नारायणसिंहजी राजस्थान राजकीय सेवा में प्रधानाध्यापक के रूप में रिटायर हुए। आध्यात्मिक साधना हेतु आप अविवाहित रह कर अपने पिताश्री के पदचिह्नों पर अग्रसर रहे। आप बड़े विनम्र, शान्त और सेवाभावी थे। ठाकुर सा० की पावन समाधि मन्दिर पर रह कर आप अनवरत सेवा-साधना में संलग्न रहे। समाधि मंदिर की देख-रेख और सेवा-प्रकल्पों का योग्य संचालन करते हुए आप आगन्तुक महानुभावों को अध्यात्म मार्ग पर बढ़ने को प्रेरित व प्रोत्साहित करते रहते। उनका देहावसान 12 अप्रेल 2001 को हो गया। अब समाधि मन्दिर की देख-रेख ठाकुर-प्रभु के पौत्र श्री कानसिंहजी पुत्र श्री हरिसिंहजी कर रहे हैं। वह भी बड़े विनम्र एवं सेवाभावी हैं। ठाकुर सा० के चतुर्थ पुत्र श्री विष्णुसिंहजी भी सन्यस्त हैं और नाथ सम्प्रदाय में दीक्षित हैं। दो सुपुत्रियों में से छोटी पुत्री[1] का विवाह पाटोदा निवासी श्री नाहरसिंहजी शेखावत[2] के साथ हुआ, जो तहसीलदार के पद से सेवानिवृत्त हुए थे। आपने ठाकुर सा० को सद्गुरु के रूप में स्वीकार किया और उनके प्रति आपके हृदय में अगाध श्रद्धा रखी। श्री नाहरसिंहजी सेवाभावी और सहृदय व्यक्ति थे। आपने शास्त्रों का गहन अध्ययन किया तथा ज्ञान और भक्ति का आपके व्यक्तित्त्व में सुन्दर समन्वय दिखाई देता था।

---

1. **छोटी पुत्री लक्ष्मण कँवर का देहावसान 8-10-2009 को हो गया।**
2. **दामाद श्री नाहरसिंहजी शेखावत का देहावसान 17-12-2009 को हो गया**

11

सती बाई सा. दयाल कँवर

ठाकुर सा० श्री रामसिंहजी की बड़ी पुत्री दयाल कँवर का जन्म श्रावण-शुक्ला दसमी बुधवार संवत् 1986 में मनोहरपुरा ग्राम में हुआ था। बचपन से ही इनमें चमत्कारी लक्षण दिखाई देते थे। घर का वातावरण आध्यात्मिकता से परिपूर्ण था। माता-पिता का आदर्श जीवन इनके लिये सुन्दर प्रेरणा स्रोत था। छः मास की छोटी आयु में आपके पिताश्री के गुरु भगवान महात्मा रामचन्द्रजी आपके घर पधारे थे और इन्हें उनका स्नेहपूरित आशीर्वाद मिला था। आपने घर पर रह कर ही प्राथमिक-शिक्षा ग्रहण की। करीब आठ वर्ष की आयु में ही आप घर के काम-काज सुचारू रूप से करने लगीं और अपने माता-पिता की भी सेवा-सहायता करतीं। उनके पास-बैठकर रामायण का पाठ सुनतीं और बालसुलभ भावों में खो जातीं। आयु बढ़ने के साथ-साथ आपके सद्‌गुण विकसित होने लगे। आप दूसरों की बातचीत बड़ी शान्ति से सुनतीं; कोकिल सी मीठी वाणी बोलतीं और सबसे प्रेमपूर्ण व्यवहार करतीं। घर के बाहर बहुत कम निकलतीं। अपने पिताश्री के साथ जल्दी उठकर साधन-भजन करतीं और सद्‌ग्रन्थों का पठन करतीं। बालिका दयाल कँवर को कभी-कभी भविष्य में घटने वाली घटनाओं का पूर्वाभास हो जाता और उनमें विलक्षण दैवी-शक्ति के दिग्दर्शन होते।

दयाल कँवर जब बड़ी हुई तो माँ गोपाल कँवर को आपके विवाह की चिंता हुई। वे अपने पतिदेव को उनके लिये वर ढूंढ़ने को कहतीं। एक दिन ठाकुर सा० ने उनसे कहा "आप क्यों चिंता करते हो! गुरु भगवान की कृपा से इनके लिये घर बैठे वर मिल जाएगा।" इन्हीं दिनों श्री भवानीसिंह नामक युवक खूड़ हाउस (जयपुर) में रहते थे। इन्हें जब मालूम हुआ कि ठाकुर सा० की बड़ी सुपुत्री विवाह योग्य हैं, तो इन्हें उनसे विवाह करने की अन्तःप्रेरणा हुई। आपने पत्र के माध्यम से ठाकुर सा० को अपने मन का भाव प्रेषित किया। पत्र पढ़कर

ठाकुर सा० गद्‌गद् हो गुरु भगवान के प्रति कृतज्ञता से भर गये। श्री भवानीसिंहजी सिंहपुरी के निवासी थे। माता-पिता का देहावसान बचपन में ही हो जाने के कारण, आपका पालन-पोषण व शिक्षण खूड़ सरदार मंगलसिंहजी ने किया; जिन्हें आपने आजीवन पितातुल्य सम्मान दिया। आप बड़े कुशाग्र बुद्धि व सदाचारी नवयुवक थे। नवलगढ़ से मैट्रिक पास कर आपने सनातन धर्म कॉलेज कानपुर से बी. कॉम. की परीक्षा उत्तीर्ण की। वहाँ पढ़ाई के साथ-साथ उन्होंने स्वाधीनता संग्राम में भी अगुआ होकर भाग लिया। इनका व्यक्तित्व काफी आकर्षक था। आप अच्छे घुड़सवार थे। आप फुटबाल के भी योग्य खिलाड़ी रहे।

इनमें प्रारम्भ से गहरी आध्यात्मिक जिज्ञासा थी। जब वे किशोरावस्था के थे तब उन्हें पता चला कि थानेदार ठाकुर रामसिंह जी एक उच्चकोटि के गृहस्थ संत हैं; तो वे उनसे मिलने नवलगढ़ थाने पहुँच गये और बड़ी विनम्रता से उन्हें अपनाने की प्रार्थना की। ठाकुर सा० ने इन्हें बड़े प्रेम से बिठाया और बातचीत की। फिर इनकी आध्यात्मिक जिज्ञासा देख इन्हें पढ़ाई पूरी होने के बाद आने की सलाह दी; तभी से आपके हृदय में ठाकुर सा० के प्रति गहरी श्रद्धा पैदा हो गई। पढ़ाई खत्म होने पर भवानीसिंह वापस खूड़ आ गये। इसी बीच आपकी आंतरिक जिज्ञासा फिर से जाग उठी और ये अरविन्द आश्रम पांडुचेरी जाकर महर्षि श्री अरविन्द के अनन्य शिष्य हो गये। इधर खूड़ सरदार मंगलसिंहजी ने ठिकाने का सारा काम-काज इन्हें सौंप दिया। आपने बड़ी कुशलता से ठिकाने का प्रबन्ध किया। पूरे क्षेत्र में शिक्षा का प्रसार किया और एक बहुउद्देशीय विद्यालय भी शुरु किया, जिसमें आप खुद भी पढ़ाते। कन्ट्रोल के उस ज़माने में आप ऑनरेरी तहसीलदार रहे और आपने अनाज, कपड़ा, चीनी आदि राशन के वितरण की बड़ी सुन्दर व्यवस्था की। जब जयपुर रियासत में प्रतिनिधि सभा का गठन हुआ तो आपको दांता रामगढ़ से एम.एल.ए. निर्वाचित किया गया और आपने यहाँ की जनता का बड़ा प्रभावी प्रतिनिधित्व किया।

भवानीसिंहजी के पवित्र भाव समझकर ठाकुर सा० ने श्री मंगलसिंहजी से उनके विवाह के बारे में सलाह की और आपके साथ बाई सा. का संबंध तय करके सगाई की रस्म पूरी की गई। इसी बीच इस इलाके में भयंकर बाढ़ आने से धन-जन की भारी हानि हो रही थी। अतः राजपूत महासभा ने कुँवर भवानीसिंहजी को बाढ़ग्रस्त लोगों के राहत कार्यों की पूरी जिम्मेदारी सौंप दी। आप बड़ी तत्परता से असहाय लोगों की सेवा में जुट गये। भूखे-प्यासे रहकर रात-दिन बेघरबार लोगों की सहायता में लगे रहते। लगातार मेहनत और अनियमितता के कारण आप इन्हीं दिनों अस्वस्थ रहने लगे; लेकिन आपने राहत कार्य जारी रखा। दैवयोग से बीमारी बढ़ते-बढ़ते राजयक्ष्मा (टी.बी.) में बदल गई। आपको खूड़ लाकर इलाज शुरु किया गया। तभी अक्ष्य तृतीया, संवत् 2003 को आपके विवाह की तिथि निश्चित हो गई। विवाह से पूर्व जब लगन भेजा गया तो भवानीसिंह की अस्वस्थता के कारण यह दस्तूर उनकी तलवार के साथ हुआ। विवाह की तैयारियाँ शुरु हुईं। उस समय कन्ट्रोल का जमाना था और चीनी राशन से मिलती थी। ठाकुर सा० ब्लेक से चीनी खरीदने के पक्ष में नहीं थे। अतः राशन की कुल सवा मन चीनी ही मिल पाई। ठाकुर सा० का ख़याल था कि इससे मिठाई बना कर बढ़ार के दिन एक टाइम बारातियों को परस देंगे। लेकिन जब हलवाईयों ने मिठाईयाँ बनाना शुरु किया, तो उसी चासनी से पाँच तरह की मिठाइयाँ बन गईं और सभी बारातियों एवं घरातियों को सभी पंगतों में भरपूर मिठाइयाँ परसी गईं। बाई सा. के साथ भी काफी मिठाई भेजी गई और उनके लौटने के बाद भी यह कई दिनों तक चलती रही। फिर भी चासनी बची रही जिसका करीब पच्चीस सेर बूरा बना। इस प्रकार भक्त नरसी मेहता जैसा मायरा बाईसा के विवाह में भरा गया। विवाह की सारी व्यवस्था ठाकुर सा० के धर्मभाई श्री केशवसिंहजी सम्हाल रहे थे। बारात में बड़े-बड़े ठिकानों के सरदार पधारे थे और सारा इन्तजाम देख काफी प्रसन्न थे। विवाहोत्सव की ऐसी सुन्दर व्यवस्था देख

आपके गुरुभाई ठाकुर मूलसिंहजी कहने लगे कि इस विवाह में ब्रह्मा, विष्णु, महेश सभी काम कर रहे हैं। पाणिग्रहण संस्कार के समय भी कुँवर भवानीसिंहजी बीमार थे। फेरे व हथलेवे की रस्म पूरी होने के बाद जब बाई सा. उठे तो उनसे उठा नहीं गया। ऐसा विश्वास है कि उन्होंने अपने पति से अभिन्न हो उनकी आधी बीमारी अपने शरीर में खींच ली। विवाह की वेदी पर ही सती बाई सा. ने अग्निदेव को साक्षी मान कर मन ही मन संकल्प कर लिया कि यदि उनके पतिदेव जीवित नहीं रहे तो वे भी अपना शरीर त्याग देंगी।

शादी के बाद जब बाई सा. वापस गाँव आये तो अपनी माताजी को चिन्तित देखकर अपनी छोटी बहिन से बोलीं ''भाभोसा. क्यां को सोच करे है इतनो! वे नी रेवेला तो मैं तो रहूँली ही नहीं!'' (भाभोसा. इतना क्यों सोच करते हैं। वे यदि जीवित नहीं रहे, तो मैं भी नहीं रहूँगी)

विवाह के बाद भवानीसिंहजी को इलाज के लिये बीकानेर ले जाया गया। इधर दयाल कँवर भी गहन साधना में निरत रहने लगीं। वे हर काम निर्भय होकर ईश्वर भरोसे करतीं। कठिन से कठिन परिस्थिति में अद्भुत संतुलन रखतीं; कभी झूठ नहीं बोलतीं और सबके साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार करतीं। बड़े मनोयोग से परमेश्वर की आराधना करतीं और तपस्विनी की भाँति सदा सेवा सहायता में संलग्न रहतीं।

भवानीसिंहजी रुग्णावस्था में भी अपनी दैनिक डायरी लिखा करते। अपनी धर्मपत्नी के संदर्भ में उनके अंतिम उद्गार इस प्रकार थे ''मुझे लगता है कि मेरे जीवन का अंत सन्निकट है। फिर भी जब दयाल मेरे सामने आती हैं तो मुझे कोई दुःख नहीं रहता, मुझे वे महान शक्ति-रूपा लगती हैं, जो मेरी चिता के साथ ही अपने जीवन को भस्मीभूत कर सकती हैं।'' बीमारी की हालत में भवानीसिंहजी को सती बाई सा. साक्षात् जगदम्बा के रूप में दिखाई देती थीं। उन्हें निश्चय हो चुका था कि पत्नी के रूप में उन्हें एक महान् सती मिली हैं।

जब सारे इलाज के बाद भी रोग बढ़ता चला गया और डाक्टरों ने जवाब दे दिया तो रोग को असाध्य समझ भवानीसिंहजी को वापस खूड़ लाया गया और उन्हें गाँव से बाहर बाग वाले महल में ठहराया गया। खूड़ ठाकुर मंगलसिंहजी इनका अन्त निकट समझ काफी दुःखी थे। उन्होंने भवानीसिंहजी को पुत्रवत् पाला था। एक अंतिम प्रयास के रूप में आपने भवानीसिंहजी का स्थानीय वैद्यराज से इलाज शुरु करवाया। किन्तु हालत गिरती ही चली गई। बाई सा. दयाल कँवर को पता चलने पर, गढ़ में अनेक प्रकार दान-पुण्य करके वे आपके पास बाग में आ गईं। आते समय साथ में अपने पीहर का केसरिया बेस, काजल, कुंमकुंम आदि सामान भी रख लिया। बाग में पहुँच कर आप सीधे अपने पतिदेव की शैय्या के पास पहुँची और उनके पाँव छूकर धैर्यपूर्वक नीचे बैठ कर प्रार्थना करने लगीं। कुछ देर बाद आपने शुद्ध जल से हाथ-पैर धोये। संध्या होने को थी। आपने ठिकाने के कामदार हरीसिंहजी को बुलाकर झरोखे से बाहर पश्चिम दिशा की ओर इशारा करते हुए कहा कि ''कल सवेरे उस टीले पर धूमधाम से चिता सजावें; मैं भी उनके साथ ही जाऊँगी!'' हरिसिंहजी ये उद्‌गार सुन अवाक् रह गये, उनकी कुछ भी कहने की हिम्मत नहीं हुई।

उस दिन बाई सा. का एकादशी का निराहार व्रत था। आप आसन लगा कर ध्यान मग्न हो गईं। थोड़ी देर बाद आप अचानक आसन से उठ खड़ी हुईं और दासियों को संकेत किया कि उनके पतिदेव अब शरीर छोड़ने वाले हैं। आपने उनकी ओढ़ी हुई एक शाल मँगवाई और इससे मुँह ढक कर वे सुखासन में स्थिर बैठ जाप करने लगीं। उसी समय रात लगभग 11 बजे भवानीसिंहजी ने अपना पार्थिव शरीर छोड़ दिया। बाई सा. सवेरे चार बजे तक अखण्ड जाप करती रहीं। तत्पश्चात् आसन से उठ कर आपने शुद्ध जल मँगवा कर स्नान किया और केसरिया वेश पहन पूरा श्रृंगार किया। फिर आप हाथों में श्रीफल लिये, घूंघट निकाले महल से नीचे उतर आईं। सूर्योदय

होने को था। तब तक आपके सती होने की खबर रातों-रात आस-पास के गाँवों में फैल चुकी थी। चारों ओर से जन-समुदाय उमड़ा चला आ रहा था। उसी समय भवानीसिंहजी का पार्थिव शरीर नीचे लाया गया। सती बाईसा ने इसकी सात परिक्रमा कर अर्चना की। फिर हजारों भाव-विभोर नर-नारियों की जय-जयकार के बीच शवयात्रा प्रारंभ हुई। अनेक भजन मंडलियाँ हरि-कीर्तन करती हुई चल रही थीं। गढ़ का पूरा लवाज़मा सम्मान हेतु साथ था। सती बाई सा. पीछे-पीछे महिलाओं के बीच शांत भाव से जाप करती हुई गमन कर रही थीं। निर्धारित स्थल पर पहुँच कर पवित्र चिता सजाई गई। बाई सा. ने मुँह में मोती धारण कर ग्यारह आहुति देकर अग्निदेव से प्रार्थना की और बिना सहारे के शीघ्रता से चिता पर आरूढ़ हो अपने पतिदेव के सिर को गोद में रख परमेश्वर की प्रार्थना में लीन हो गईं। उस समय का दृश्य अवर्णनीय था। जन समुदाय मंत्रमुग्ध हो अनुपम उत्सर्ग को निहार रहा था। आपके देवर प्रतापसिंहजी ने मंत्रोच्चारण के बीच चिता में अग्नि-संस्कार किया, चिता धू-धू कर प्रज्ज्वलित होने लगी। गले तक अग्नि पहुँचने तक सती बाईसा स्थिर बैठे रहे। फिर उपस्थित जनसमूह को आशीर्वाद देते हुए अग्नि में समाहित हो गये। इस प्रकार कार्तिक शुक्ला द्वादशी सम्वत् 2005 की प्रातःबेला में दयाल कँवर सर्वस्व समर्पण कर सती हो गईं। उनका यह अद्वितीय उत्सर्ग आज भी लोक-मानस में अमर है। खूड़ में इसी स्थान पर सतीमाता का सुन्दर मन्दिर बनाया गया, जो सीकर जिले का लोकतीर्थ है।

इधर सतीमाता के पिताश्री ठाकुर रामसिंहजी को जब अपने दामाद की चिन्ताजनक हालत की सूचना मिली, तो वे तुरन्त खूड़ के लिये रवाना हुए। रास्ते में वे जब भंगवा गाँव पहुँचे तो लोगों को सतीमाता का जयघोष करते हुए आते देखा। जब उन्हें भवानीसिंह के साथ दयाल कँवर के सती हो जाने का पता लगा तो ठाकुर सा० भाव-विभोर हो बोल उठे "हे प्रभु! आपकी बड़ी कृपा हुई; आपने जो किया

वह ठीक है''। जब आप दाह-स्थल पर पहुँचकर चिता की भस्म लेकर अपने मस्तक पर टीका लगाने लगे तो किन्हीं साहब ने संकेत किया कि वे तो आपकी सुपुत्री थीं। इस पर ठाकुर सा० ने फरमाया ''पुत्री! वे तो अब जगद्जननी हो गई हैं!''

इस घटना के पश्चात् कानून के मुताबिक सती-केस बना। डर के कारण गलत बयान और गोलमाल रिपोर्ट हुई। किंतु जब ठाकुर रामसिंहजी को इसका पता लगा तो उन्होंने सारी कार्यवाही को बदलवाया। गवाहों के सही-सही बयान कलमबंद करवाए और सही-सही रिपोर्ट लिखवाई। कुछ समय केस चला, किंतु अंत में सभी लोग निर्दोष बरी हो गये। सत्य की विजय हुई।

सद्गुरु दर्शन और आत्मसाधना

ठाकुर सा० का शुरु से ही गहरा आध्यात्मिक झुकाव था। आप छन्दगीता, भक्ति-सागर आदि ग्रन्थों का स्वाध्याय करते और ध्यान-धारणा का अभ्यास करते। जब कभी आपको पता लगता कि कहीं कोई महात्मा आये हुए हैं तो आप उनकी सेवा में पहुँच जाते। घर से उनके लिये खीर-पुए आदि बनवा कर ले जाते और सत्संग करते। एकान्त में रहने वाले साधुओं का भी आप पता लगा कर पहुँच जाते और उपदेश सुनते। लेकिन आपको जिस चीज़ की खोज थी वह कहीं नहीं मिल पाई, अतः तृप्ति नहीं हुई।

आप संकल्प के धनी थे। होश संभाला तभी से आपने सच्चाई के रास्ते पर चलने का निश्चय कर लिया, जिसे आपने दृढ़ता से अन्तिम साँस तक निभाया। सत्य आपके सम्पूर्ण जीवन का पर्याय बन गया, मानो इसी एक साधना पर आपने सर्वस्व दाँव पर लगा दिया। जिस कठोरता से आपने सत्यनिष्ठा का निर्वाह किया, वह सतयुग की कल्पना से भी परे है।

जब आप रेलवे पुलिस निवाई में हेड-कांस्टेबल होकर गये, उस समय वहाँ कृष्णचन्द्रजी भार्गव रेल्वे में टाइमकीपर थे। उन्हें जब पता लगा कि नये पुलिस इन्चार्ज बड़े ईमानदार आदमी हैं; रिश्वत तो दूर वे किसी की सिगरेट तक नहीं पीते, तो भार्गव साहब बड़े प्रभावित हुए और आपसे मिले। वार्ता के बीच उन्होंने ठाकुर सा० से पूछा कि आपके सतगुरु कौन हैं? इस पर आपने उत्तर दिया कि जिस किसी से कुछ सीखने को मिले वही गुरु है। भार्गव सा. ने बताया कि यह बात और है तथा सतगुरु बात और है। जो सत् से मिलाये, सत का दर्शन कराये उन्हें सतगुरु कहते हैं। इस पर ठाकुर सा० ने कहा कि यह ईश्वर का कार्य है, समय आने पर सतगुरु स्वयं मिल जायेंगे। दो-तीन दिन बाद भार्गव सा. ने आपको अपने गुरु महाराज महात्मा श्री रामचन्द्रजी की एक तस्वीर दिखाई, जिसे देख कर आपके दिल में कुछ अजीब सी कशिश पैदा हुई। अतः आपने कुछ दिनों के लिये यह चित्र अपने पास टेबल पर रख लिया। दो-चार दिनों में ही लालाजी महाराज के इस चित्र का ध्यान करने पर आपको विचित्र मस्ती और आकर्षण का एहसास होने लगा। इस पर आपने महात्माजी को पत्र लिखा जिसमें मेस्मेरेजम सीखने की भी इच्छा व्यक्त की। उन्होंने तुरन्त उत्तर दिया कि मैं मेस्मेरेजम नहीं जानता, यह अंधकार की ओर ले जाता है। यदि आत्म-विद्या संबंधी जिज्ञासा हो तो वे सेवा के लिये तत्पर हैं। इस पर ठाकुर सा० ने लिखा कि "मैं तो आपका हो चुका" और मन ही मन समर्पित हो गये। बाद में जब महात्मा रामचन्द्रजी ने आपको लिखा कि एक बार स्थूल-शरीर से मिलना जरूरी है, तो आपने ड्यूटी से अवकाश न मिल पाने के कारण उनसे खुद पधार कर दर्शन देने का अनुरोध किया। प्रेम के वशीभूत हो महात्माजी (लालाजी महाराज) आपसे मिलने बाँदीकुई पधारे। आप उस समय पलसाना में थानेदार थे। सूचना मिलते ही आप एक दिन का अवकाश लेकर आपके पास पहुँचे और प्रणाम करके अर्ज़ किया कि "मैं रामसिंह

हूँ, दर्शनों के लिये हाज़िर हुआ हूँ।'' यह सुन लालाजी महाराज ने फरमाया कि ''आप आ गये! आप हूबहू वैसे ही हैं, जैसा आपको देखा था। आपका प्रेम मुझे यहाँ तक खींच लाया है।''

अगले दिन आप उन्हें अपने साथ पलसाना थाने में ले पधारे। वहाँ गंगाजल से चरण पखार कर चरणामृत पिया। फिर भोजन बनाकर भोजन कराया। अगले दिन दोनों जयपुर आ गये। लालाजी महाराज ठाकुर सा० के गाँव मनोहरपुरा भी पधारे और कुछ दिन बिराजे। एक दिन जब आप इक्के में बैठकर चाँदी की टकसाल जा रहे थे तो ताँगे वाला एक गज़ल गाने लगा-

तेरे इश्क का ये असर देखता हूँ,
तरक्की पे दर्दे जिगर देखता हूँ।
समाया है जब से तू मेरी नज़र में ,
जिधर देखता हूँ तुझे देखता हूँ।।

यह सुनते ही आपको लगा कि 'यह तेरे लिये गुरु-भगवान की ओर से पैग़ाम आया है।' अगले दिन से आपको ऐसा महसूस होने लगा कि ''मैं वैसे ही देखता हूँ जैसे गुरु-भगवान देखते हैं; वैसे ही चलता हूँ जैसे गुरु-भगवान चलते हैं।'' इस तरह आप पूरी तरह गुरुरूप हो गये। आपको उनका तसव्वुर रहने लगा। लालाजी महाराज जब जयपुर से जाने लगे तो आप उन्हें पहुँचाने स्टेशन गये। जब आप ट्रेन में बिराज रहे थे तो ठाकुर सा० ने गुलाब के फूलों का एक सुन्दर गुलदस्ता उन्हें भेंट किया। लालाजी ने गुलदस्ता लेते हुए फरमाया कि–''कुँवर सा. आपकी खुशबू भी ऐसे ही फैलेगी जैसी इस गुलदस्ते की।'' तत्पश्चात् आप पहली बार फतेहगढ़ भंडारे पर गये। लालाजी महाराज ने बताया कि गुरु के पैर नहीं छूना चाहिये, तो किन्हीं साहब ने **'पारस लोहा कन्चन करता, पारस नहीं बनाता रे'**– यह भजन गाया और पूछा कि ऐसे सतगुरु के भी पाँव न छूएँ तो किसके छूएँ। इस

पर लालाजी ने फरमाया- ''इतनी श्रद्धा हो तो पैर छू सकते हैं, लेकिन जो छिप-छिप कर ऐब करे उसे इसका अधिकार नहीं है।'' इस पर ठाकुर सा० को ख़याल आया कि अरे तू तो छिप-छिप कर सिगरेट पीता है। आपने उसी समय सिगरेट का पैकेट और माचिस दूसरे भाई को दे दिये और हमेशा के लिये सिगरेट छोड़ दी। एक अन्य साहब पंडित रामेश्वरजी ने जब बताया कि अपनी साधना में 'गुरुरूप हो जाना चाहिये', तो आपने उन्हें, गुरु-भगवान के दर्शनों के बाद हुई अपनी हालत का उल्लेख किया। इस पर वे कहने लगे कि आप पर गुरु-महाराज की विशेष कृपा है कि वे स्वयं आप में प्रवेश कर विराज गये।

ठाकुर सा० फरमाते कि गुरु-भगवान के दर्शनों के बाद सब काम आसान हो गये। नाराज़ अफसर भी राजी रहने लगे, मानों वे हर समय अपनी सम्पूर्ण महिमा सहित साथ रहते और सहायता पहुँचाते। आप फरमाते– ''मेरे जैसे नालायक पर गुरु-भगवान ने किस कारण इतनी कृपा बरसाई, मैंने तो किसी भी प्रकार की सेवा नहीं की। न जाने कौन से गुण पर दयानिधि रीझ जाते हैं।'' पता नहीं कब कोई अदा उन्हें भा जाती है और वे हमें निहाल कर देते हैं। ठाकुर सा० की अपने गुरु-भगवान के प्रति अनन्य भक्ति व शरणागति अद्वितीय थी, जिसका रसपान हम आगे करेंगे।

21

अभिनव सेवा-काल

ठाकुर सा० श्री रामसिंहजी का सेवाकाल अभिनव रहा। आपने सामान्य कांस्टेबल के रूप में जयपुर स्टेट पुलिस में सेवा प्रारम्भ की। पुलिस विभाग में आपने कर्त्तव्य-निष्ठा व प्रमाणिकता के जो असामान्य कीर्तिमान स्थापित किये, वे आज भी उनका यशोगान करते हैं। आइये! इस महान् कर्म-योगी के सुनहरे सेवाकाल का थोड़ा दिग्दर्शन करने का प्रयास करें।

अपने पूज्य पिताश्री के कथनानुसार आपने पुलिस में भर्ती होकर पलसाना थाने से सेवा प्रारम्भ की। शुरु से आपने ऐसे बदनाम महकमे में रह कर भी सत्यनिष्ठा और कर्त्तव्य-परायणता का ध्रुव संकल्प लिया। काँटो भरी इस डगर को साधना का सम्बल बना आप मुस्तैदी से चल पड़े। योग्यता एवं कर्त्तव्यनिष्ठा के आधार पर आपको शीघ्र ही हेड-कांस्टेबल बना कर निवाई में रेलवे पुलिस स्टेशन का चार्ज दिया गया। कुछ ही माह पश्चात् आपको थानेदार (सब-इन्सपेक्टर) के पद पर पदोन्नत कर सवाई-माधोपुर थाने पर तैनात किया गया। आप जोबनेर, फुलेरा, सांगानेर, नवलगढ़, मण्डावा, बस्सी, खाटूश्याम, बाँदीकुई, साँभर आदि कई स्थानों पर थानेदार के पद पर आसीन रहे।

सेवाकाल में जिस भी इलाके में थानेदार रामसिंहजी की पोस्टिंग होती वहाँ के लोगों में खुशी की लहर दौड़ जाती। कई जरायम-पेशा(अपराधी) लोग आपके आने की खबर सुनकर वह इलाका छोड़ कर अन्यत्र चले जाते। लोग चैन की नींद सोने लगते। उन थानों की अपराध संख्या काफी कम हो जाती। जो मुल्ज़िम पकड़े जाते उनमें से कई आपके आत्मिक प्रभाव से अपना अपराध कबूल कर लेते और खुशी-खुशी सजा भुगतते। आप कैदियों को भोजन करा कर भोजन करते, जैसा खाना खुद खाते वैसा ही खाना उन्हें खिलाते। कभी-कभी

स्वयं खाना बना कर उन्हें परोसते। आपके सम्पर्क में आने के बाद कई अपराधियों का जीवन ही बदल गया। चोरी-डकैती छोड़कर, सन्मार्ग पर चलने लगे। ऐसे लोगों की आप भरपूर मदद करते, उन्हें रोजगार दिलाने के लिये पूरा प्रयास करते, उनकी सिफारिश करते, उनका प्रबोधन कर उनमें आत्म-विश्वास जगाते। अपराधियों के विरूद्ध आप मुस्तैदी से कानूनी कार्यवाही करते; उन्हें सजा दिलवाते, साथ ही उनके कल्याण के लिये ईश्वर से मंगल-कामना करते। आपका सबके प्रति आत्म-भाव रहता। आपने कभी किसी अपराधी के साथ मारपीट या गाली-गलौच नहीं की। जाँच-पड़ताल के दौरान जब आप मुल्जिमों से पूछते कि 'बोलो रामजी!' तो उन खूँखार कैदियों के मुँह से वास्तव में 'राम' बोलने लगता। आपके तप के प्रभाव से वे घटना का सही-सही उल्लेख करते, अपना अपराध स्वीकार करते और पूरा सहयोग देते। ऐसी अनेकों घटनाएँ हैं कि खौफ़नाक डाकुओं व मुल्ज़िमों ने आपके सामने आत्म-समर्पण कर ख़ुशी-ख़ुशी सजा भुगती और आगे के लिये अपने जीवन की दिशा बदल दी।

सेवाकाल में सारे कष्टों व बाधाओं के बावजूद भी ठाकुर साहिब अपनी ड्यूटी के प्रति सदा सजग रहते। वे अपने आराम-भोजन आदि से बेख़बर हो अपना फ़र्ज़ पूरा करते। किसी वारदात की सूचना मिलते ही परसी थाली, या हाथ का ग्रास छोड़, आप तुरन्त जाँच के लिये दौड़ पड़ते और घटना-स्थल पर पहुँच कर बड़ी निडरता व सुझबूझ से जाँच-पड़ताल करते। आंधी-तूफान हो, तेज बारिश हो, कड़ाके की सर्दी-गर्मी हो, तेज बुखार हो; हर परिस्थिति में वे दिलेरी से अपनी ड्यूटी अन्जाम देते। सारे पुलिस विभाग में आपकी सच्चाई कर्त्तव्य-निष्ठा की मिसाल दी जाती। पूरे सेवाकाल के दौरान आपने अकेले रह कर सजगता से अपना कर्त्तव्य निभाया। नियमानुसार जैसी भी घटना होती वैसी ही अपनी रिपोर्ट में दर्ज करते और इसमें किसी प्रकार का फेर-बदल नहीं करते। तत्कालीन चीफ़ जस्टिस शीतलाप्रसादजी वाजपेयी आपकी

लिखी एफ. आई.आर. देख कर बिना गवाहों को सुने अपना फैसला सुना देते। बड़े से बड़े अधिकारी आपकी इज्ज़त करते और बड़े आदर से आपका ज़िक्र करते।

आपकी सच्चाई व ईमानदारी की अनेक घटनाएँ आज भी सुनी जाती हैं। बिना मूल्य चुकाये आप किसी का अन्न-जल ग्रहण नहीं करते, कुएँ से पानी निकाल कर वहाँ पैसा-डालकर पानी पीते। शेखावटी जैसी मरूभूमि में भी खुद अपने लोटे डोर से पानी निकालते, किसी की सवारी का इस्तेमाल करते तो पूरा किराया दिये बगैर नहीं हटते। पैसे लेने से कोई इन्कार करता तो आप उसे वापस उसी जगह छोड़ आने को कहते, मजबूरन उसे पैसे लेने पड़ते। किसी के लालटेन की रोशनी में भी रिपोर्ट लिखते तो तेल का पैसा चुकाते, अपने ऊँटों का मुँह बंधवा देते ताकि वह किसी के खेत से फसल न खा सकें।

आप अपना सारा काम यथासम्भव खुद करते। यदि कभी किसी से अपना काम लेना भी पड़ा तो उसका भरपूर पारिश्रमिक देते। स्नानादि के बाद पानी का घड़ा भर लाते, अपना भोजन बनाते, सफाई करते। दौरे पर जाते तो खुद अपना बिस्तर-सामान उठा कर चलते। दूसरों की सब तरह सेवा करते, लेकिन खुद सेवा लेने से बचे रहते। रिश्वत न लेते, न अपने किसी कर्मचारी को लेने देते। दौरे पर जाते तो अल्प-वेतन भोगी सिपाहियों के भोजन आदि की व्यवस्था अपने खर्चे से करते। कोर्ट-कचहरी जाते-आते तो जितना खर्चा होता उतना ही चार्ज करते। गाँव चले जाते तो उस दिन का भत्ता नहीं लेते।

कई बार थैले में रखा चना-गुड़ खाकर गुजारा कर लेते, लेकिन मुफ्त में किसी का अन्न नहीं खाते। आपके सम्पर्क में आकर अनेक पुलिस कर्मियों के जीवन की दिशा बदल गई। आप आजीवन सत्य की तुला को दृढ़तापूर्वक थामे रहे, जिसका संतुलन कभी कोई डिगा

न सका। आपकी सत्यनिष्ठा सतयुग की कल्पना से भी परे थी। पुलिस विभाग जैसी काजल की कोठरी में वे पूरी तरह बेदाग ही नहीं रहे, बल्कि उन्होंने कर्त्तव्य-निष्ठा और ईमानदारी के जो महान कीर्तिमान स्थापित किये वे युगों-युगों तक जन-मानस को सतत् अनुप्राणित करते रहेंगे।

ठाकुर-प्रभु ने दिनांक 14 जनवरी, 1971 को मकर संक्रांति के दिन, रात के लगभग 2 बजकर 15 मिनट पर अपने पार्थिव शरीर से विदा ली। दिनांक 15 जनवरी 1971 को तीसरे पहर गाँव वाली बगीची में आपके पार्थिव शरीर का अग्नि-संस्कार हुआ, जहाँ आज आपका व पूज्य मातुश्री गोपाल कँवर जी का समाधि मन्दिर बना है। प्रतिवर्ष 14 व 15 जनवरी को यहाँ दो दिन का एवं सन्त जयन्ती तीन सितम्बर को एक दिन का सत्संग समारोह (भंडारा) होता है, जिसमें श्रद्धालु भक्तजन बड़ी संख्या में पधार कर अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हैं।